शोध-चिंतन पत्रिका: विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका
वर्ष: 3, अंक:4; जनवरी-जून, 2022
पृष्ठ संख्या : 34-53

'करवट' और 'ढाई घर' में चित्रित अंग्रेजकालीन भारत

✍ डॉ॰ संजीव मण्डल

शोध-सार :

'करवट' और 'ढाई घर' उपन्यास में जो कालखण्ड लिया गया है, वह भारत में अंग्रेजों के शासन का काल है। 'करवट' में युवा पीढ़ी की अंग्रेजी शिक्षा का महत्व समझ उसके प्रति आकर्षित होते जाने का वर्णन है। इस उपन्यास में अग्रेंजों के भारत में आने पर उनके साथ एक नयी चेतना का भारत में आगमन होता है। इससे भारतीय समाज व्यवस्था में परिवर्तन होने लगता है। पुरानी पीढ़ी और नयी पीढ़ी के बीच नयी विचारधारा को लेकर संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। भारत में ब्राह्म समाज के प्रभाव का भी बहुत विस्तार से वर्णन हुआ है। वही 'ढाई घर' उपन्यास में अंग्रेजकालीन भारत में नारी की पराधीनता का चित्रण किया गया है। साथ ही भारतीय जमींदारों के अंग्रेजों की राजनीतिक गुलामी ही नहीं, मानसिक गुलामी करने का भी खुला चित्रण हुआ है। इस उपन्यास में बड़े राय भारत का भविष्य देख लेते हैं कि शिक्षित लोगों के पास ही सारी क्षमता केंद्रित हो जायेगी और परोपजीवी लोगों का जमाना खत्म हो जायेगा। प्रजा पर जमींदारों के अमानवीय अत्याचार को भी बिम्बित किया गया है।

बीज शब्द : *अंग्रेजी शिक्षा, नयी चेतना, ब्राह्म समाज, जमींदार, अत्याचार*

प्रस्तावना:

उपन्यास अमृतलाल नागर (1916 ई.-1990 ई.) और गिरिराज किशोर (1937 ई.-2020 ई.) हिन्दी उपन्यास साहित्य के दो यशस्वी उपन्यासकार हैं। अमृतलाल नागर द्वारा रचित उपन्यास हैं- 'महाकाल' (1947 ई.), 'बूँद और समुद्र' (1956 ई.), 'शतरंग के मोहरे' (1959 ई.), 'सुहाग के नूपुर' (1960 ई.), 'अमृत और विष' (1966 ई.), 'सात घूँघट वाला मुखड़ा' (1968 ई.), 'एकदा

नैमिषारण्ये' (1972 ई.), 'मानस का हंस' (1972 ई.), 'नाच्यो बहुत गोपाल' (1978 ई.), 'खंजन नयन' (1981 ई.), 'बिखर तिनके' (1982 ई.), 'अग्निगर्भा' (1983 ई.), 'करवट' (1985 ई.), 'पीढ़ियाँ' (1990 ई.)।

गिरिराज किशोर के प्रकाशित उपन्यास हैं- 'लोग' (1966 ई.), 'चिड़ियाघर' (1968 ई.), 'यात्राएँ' (1971 ई.), 'जुगलबंदी' (1973 ई.), 'दो' (1974 ई.), 'इंद्र सुने' (1978 ई.), 'दावेदार' (1979 ई.), 'यथाप्रस्तावित' (1982 ई.), 'तीसरी सत्ता' (1982 ई.), 'परिशिष्ट' (1984 ई.), 'असलाह' (1987 ई.), 'अंतर्ध्वंस' (1990 ई.), 'ढाई घर' (1991 ई.), 'यातनाघर' (1997 ई.), 'पहला गिरिमिटिया' (1999 ई.) , 'इक आग का दरिया है' (2007 ई.), 'बा' (2016 ई.), 'आंजनेय जयते' (2018 ई.)।

प्रस्तुत पत्र में हमने विवेचन के लिए दो उपन्यासों को लिया है। पहला उपन्यास अमृतलाल नागर द्वारा रचित 'करवट' और दूसरा गिरिराज किशोर द्वारा रचित 'ढाई घर' । दोनों ही उपन्यासों में अंग्रेजकालीन भारत का चित्रण हुआ है। अंग्रेजकालीन भारतीय समाज, राजनीति, अर्थनीति को बहुत ही प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया गया है।

विश्लेषण :

'करवट' और 'ढाई घर' दोनों उपन्यास स्वतन्त्रता के बाद के हैं, पर कथाकारों ने उपन्यासों में अंग्रेजों के शासनकाल के भारत का चित्रण किया है। प्रकाशन क्रम के अनुसार पहले 'करवट' और फिर 'ढाई घर' उपन्यास में चित्रित अंग्रेजकालीन भारत को समझने का प्रयास किया गया है।

'करवट' में चित्रित अंग्रेजकालीन भारत:

इस उपन्यास को तृतीय पुरुष की शैली में लिखा गया है। इस उपन्यास में अंग्रेजों के राज में अंग्रेजी शिक्षा का कितना महत्त्व हो गया था, उन्हें कहानी का हिस्सा बनाकर पेश किया गया है। इस उपन्यास का मुख्य पात्र बंसीधर टंडन अंग्रेजी शिक्षा का महत्त्व समझता है और अंग्रेजी शिक्षा

प्राप्त करने का बहुत प्रयास करता है । अंग्रेजी भाषा जानने के कारण उसको जीवन में बहुत सी सफलता मिलती है। बंसीधर टंडन के संदर्भ में उपन्यास में एक जगह वर्णन आता है-

> बंसीधर की अंग्रेजी पढ़ने की इच्छा जानी तो बोला, इसे भी सीख लेना चाहिए। यह आने वाली सरकारी जबान है। नजरबाग के पास ही फादर जेकिंस का अंग्रेजी स्कूल था। नीची मानी जाने वाली हिंदू मुसलमान जातियों के आठ नये ईसाई लड़के थे, जिनकी पढ़ाई के लिए 25 रुपया मिशन देता था। (नागर 2016:15)

बंसीधर जानता है कि अंग्रेजी पढ़ने पर उसकी किस्मत बदल सकती है । अत: वह अपने अंग्रेजी शिक्षक के हिंदू और मुसलमान धर्म को बुरा-भला कहने पर भी अपने साथी को क्रोधित होने से रोकता है-

> छोटे भैया, ये हमारे शाह के भी शाहों की कौम का है। शहजोर हमेशा कमजोरों को दबाते ही आये हैं। इसलिए इनकी बकवास को भूल जाइये। चूंकि हमारा मुस्तकबिल अंग्रेज जबान से ही निखर सकता है इसलिए चुप होकर पढ़ लीजिये। जब पढ़ाई पूरी हो जाये तो साले की टांग तोड़ देंगे। (नागर 2016:16)

अंग्रेज व्यापारियों के रूप में भारत में आये थे। पर धीरे-धीरे साम,दाम,दंड,भेद से पूरे भारत को अपने अधीन कर लिया था। नबाव वाजिद अली शाह को भी वे इसी प्रकार पदच्युत करके कैद कर लेते हैं। वाजिद अली शाह को कैद करने की बात जब लखनऊ निवासी सुनते हैं तो भय से आक्रांत हो जाते हैं-

> बादशाह के कैद में डाले जाने की बात सुनकर बंसीधर उर्फ तनकुन का कलेजा धक से उड़ गया। बादशाह कैद में डाला जायेगा, यह बात ही ऐसी भयप्रद थी कि क्षण भर के लिए उसे लगा जैसे चलते हुए तमाशे के बीच में तमाशा दिखाने वाला ही एकाएक गिरकर मर गया हो। (नागर 2016:18)

वाजिद अली शाह ने जब अंग्रेजों के कहे अनुसार काम करने से इनकार कर दिया तो उनको और उनके परिवार को बहुत बेइज्जत किया गया था। नवाब की बेइज्जती प्रजा की भी बेइज्जती थी।

पर अंग्रेजों के विरुद्ध भारतीय लड़ने के काबिल नहीं थे। वाजिद अली शाह और उनके परिवारजनों को किस प्रकार बेआबरू किया गया, इसका वर्णन इस उपन्यास में है-

> लखनऊ की हालत बहुत खराब है। बादशाह ने अंग्रेजों की शर्ते नहीं मानीं। राजीनामे पर दस्तखत नहीं किये इसलिए कंपनी सरकार उन्हें बेइज्जत करने पर तुल गई है। बड़े-बड़े रईसों की मूँछे पकड़-पकड़ कर झुका दीं इन साले अंग्रेजों ने। बेगमों से छतरमंजिल खाली करा लिया गया। उनकी और उनके बच्चों की बड़ी बेआबरुई हुई और अभी हो ही रही, भैया। कल सांझ के बखत ही हमें खबर मिली है कि बादशाह अगर उस सुलहनामे को नहीं मानेंगे, तो उनसे गद्दी छीन ली जायेगी और उन्हें गिरफ्तार कर लिया जायेगा। (नागर 2016:101)

भारत का सामंत वर्ग अकर्मण्य और भ्रष्ट हो गया था। हमारा समाज पिछड़ा हुआ था। पर इसे बदलने का दायित्व हम पर था। अंग्रेज इसमें दखल देने के अधिकारी नहीं थे। वे कहते थे कि उनके भारत पर शासन करने के बाद यहाँ अमन और खुशियाँ फैल गयी। उन्होंने भारतीय लोगों पर शासन कर उन पर एहसान नहीं किया; बल्कि उन्हें गुलाम बनाकर रखा। उपन्यास में एक जगह वर्णन आता है-

> बादशाह अशक्त हो मगर हम सबके स्वाभिमान का प्रतीक है। बंसी के अंग्रेज मित्र इन ऐयाश सामंतों की बहुत निंदा करते हैं। इसमें संदेह नहीं कि सामंतों की बहुत सी बातें सार्वजनिक रूप से निंदा के योग्य हैं। इस समाज को बदलना ही चाहिए। मगर वह शासन पद्धति बदले या हम लोग ही बदलें । बाहर वाला आकर हमें क्यों बदले। शेखी बघराते हैं, यह गोरे लोग कि हमने तुम्हारे देश के कोने-कोने में तार लगवाए, रेलें चलवायीं। जहाँ-जहाँ इन राजे-महाराजे और शाहों-नवाबों की रियासतें हमने अपनी हुकूमत में शामिल कर ली हैं,वहाँ-वहाँ अमन चैन हो गया है। (नागर 2016:119)

प्रारंभ में चीन में ही चाय का उत्पादन होता था। पूरी दुनिया में चाय एक लोकप्रिय पेय बन गयी थी। अंग्रेज दुनिया की चाय की इस खपत को पूरा करने के लिए असम में चाय की खेती करने

लगे थे। चाय के द्वारा अंग्रेज एक अच्छी-खासी आमदानी करते थे। इस उपन्यास में भी चाय के इस व्यावसाय का वर्णन आता है-

> लेकिन साथ ही साथ इसके बजाय अब 'टी' का फैशन चला है। चीन की चीज है, एक कली दो पत्ती, इसे भी उबाल कर ही पिया जाता है। पहले यह भी महंगी थी, मगर 1834 से हम लोगों ने इसे आसाम में भी उगाना शुरू किया। अब तो यह सस्ती हो चली है। एक दिन तुमको 'टी' भी पिलाऊंगा। बड़ा स्फूर्तिदायक पेय है। (नागर 2016:23)

अंग्रेजों के संपर्क के कारण भारतीयों का एक तबका विशेषत: नयी पीढ़ी आधुनिक विचार धारा से प्रभावित होने लगी थी। यह विचारधारा पश्चिम से अंग्रेजों के साथ आयी थी। भारत में सदियों से कम उम्र में विवाह हो जाया करते थे। पर आधुनिक विचारधारा से प्रभावित नयी पीढ़ी बालिग होने के बाद ही विवाह करना उचित मानने लगी थी। इस उपन्यास का पात्र विपिन अपनी माँ से बहस करते हुए टूटी-फूटी अंग्रेजी में कहता है-

> "नो यूज हियरिंग ओल्ड मैन। इंग्लिश मैन वोमैन मैरी व्हेन यंग, एण्ड नाट व्हेन स्माल बायज। अंडरस्टैण्ड?"
>
> सुनकर बंसीधर हंस पड़ा। हिंदी में बोला: "पर अभी हमारे यहाँ के लोग इतने समझदार नहीं हुए भइया।"
>
> "नो आई मेरी व्हेन आई बिकम एट्टीन इयर ओल्ड।" (नागर 2016:65)

इस पर जब माँ बोलती है कि उतनी उम्र में बराबर उम्र की कन्या कहाँ मिलेंगी? सभी कन्याओं की तो शादी हो जाती है छोटी उम्र में तो वह जवाब देते हुए कहता है कि ब्राह्म समाज में शामिल परिवार की युवती शादी करेगा। इससे इस सर्वज्ञात तथ्य की पुष्टि होती है कि उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में ब्राह्म समाज के विचार लोगों में खास कर बंगाल के लोगों में फैलने लगे थे-

> उसकी हमको बेसी चिंता नहीं, जीजाजी बर्द्धमान का राजा अपनी खत्री बिरादरी का है, उनके यहाँ ब्राह्मो ऐडियाज वाला दो एक खत्री फेमिली भी है। जदी देस वाला न मिला तो हम हुआं बीबा कर लेंगे। बीडो मैरेज कर लेंगे। बिरादरी वाले बेसी विरोध करेंगे तो ब्राह्मो या क्रिस्तान हो जायेंगे। हम अम्मा को यह बात बोल दिया है कि बार-बार पूछ के हमरा देमाक खराब करना अम्मा बाबू किसी के लिए भी अच्छा नहीं होएगा। (नागर 2016:66)

भारत की युवा पीढ़ी समझने लगी थी कि उन्हें अपनी सोच में बदलाव लाना होगा और रूढ़ियों को छोड़ना होगा। अंग्रेज इसलिए हमसे आगे है क्योंकि वे समय के साथ चल रहे हैं। उपन्यास का नायक बंसीधर इस बात का अनुभव करता है। वह चाहता है कि उसकी पत्नी भी मेमों की तरह स्वच्छंद रह सके -

> बंसीधर सोचने लगा कि यह ताजगी और विचार स्वातंत्र्य हमारे उधर के युवकों में नहीं है। बंगाल कितनी तेजी से बदल रहा है। जो समय के साथ न चलेगा वह पिछड़ जायेगा। सोचने लगा कि एक बार यहाँ जम जाए तो पत्नी को यहीं बुलवा लेगा। अच्छी शिक्षा दिलायेगा, अंग्रेजी भी सिखायेगा। वह तो चाहता है कि उसकी पत्नी मेमों की तरह आजादी का जीवन बिताए पर शायद यह संभव नहीं। बढ़ते हुए समय के साथ-साथ हमारे समाज को भी बदलना ही पड़ेगा। अभी हम लोग समय से बहुत पीछे हैं, और इसी पिछड़ेपन के कारण ही चतुर अंग्रेज हमसे कोसों आगे निकल गये। ये मुट्ठीभर लाल मुँह वाले हमारे चतुर से चतुर देसवालों को खड़े-खड़े बुद्धू बना देते हैं। (नागर 2016:66)

बंगाल अंग्रेजों के संपर्क से बहुत तेजी से तरक्की कर रहा था। भारत की बाकी जगहें उसकी तुलना में कछुए की चाल चल रही थीं। अंग्रेजी भाषा ही उन्नति का रास्ता है- यह बात युवा पीढ़ी बहुत सिद्दत से अनुभव करने लगी थी। बंसीधर भी यह बात अनुभव करता है-

> लखनऊ में अभी तक उर्दू, अरबी, फारसी का बड़ा माहात्म्य है लेकिन कलकत्ते में बेपढ़े लोगों के मुँह से भी अंग्रेजी के शब्द आम हो चले हैं। कलकत्ते में अंग्रेजी चेतना ने इंग्लैण्ड के बाद जैसे अपना दूसरा घर ही बना लिया है। यहाँ उसकी फारसी पढ़ाई की कोई कद्र नहीं, अंग्रेजी का बोलबाला है। राजा राममोहन राय और ईश्वर चंद्र विद्यासागर, केशवचंद्र सेन और प्रिंस द्वारकानाथ, देवेंद्र नाथ ठाकुर जैसे बड़े-बड़े अंग्रेजी के विद्वान हिंदू यहाँ हुए हैं। यहाँ के लोग उद्योग-धंधों में लगे हैं और हमारे यहाँ तीतर-बटेरबाजी, ठल्लेनवीसी और बुरी लतों से ही जवानों को फुर्सत नहीं मिलती। (नागर 2016:66)

भारतीय अंग्रेज मात्र को इज्जत की नजर से देखते थे। अगर किसी व्यक्ति के साथ कोई अंग्रेज दिख जाता था उस व्यक्ति का महत्त्व अपने आप बढ़ जाता था। इस उपन्यास में कहा गया है -

> अंग्रेज साहब के साथ बंसीधर को मिर्जापुर हाउस के सामने की सड़क पर आते-आते हिंदोस्तानियों की नजर ठिठक गयी। साहब इमारत के भीतर साथ ही साथ चला। सीढ़ियों पर आते-जाते दो एक पुराने किरायेदारों ने कुछ दिन पहले आये हुए नये किरायेदार के साथ गोरे साहब को आते देखा तो अदब से सलाम करते हुए बीच के रास्ते से हट गये। (नागर 2016:87)

जैसा कि हम सभी जानते हैं अंग्रेज भारत से कच्चा माल ले जाते थे और अपने कारखानों-मीलों में बने सामन भारत में लाकर बेचते थे। उनकी सामग्री बेचने के लिए कलकत्ता में बंगली व्यापारी होते थे। पर उनके साथ भारत के दूसरे हिस्सों आये व्यापारी भी इस व्यापार में उतर गये थे। व्यापार में प्रतिस्पर्धा का होना तो आम बात है। इन व्यापारियों में भी प्रतिस्पर्धा की भावना घर कर गयी थी। विपिन बंसीधर को वाल्टर स्मिथ के साथ व्यापार को लेकर हुई बातें बताता है जिससे हमें व्यापारियों की प्रतिद्वंद्विता का पता चलता है-

> वह बंगलिया तरनतारन साला अब खाय-खाय के मुटाय गया है ना। ही नाऊ नाट केयर फार सर वाल्टर एण्ड नाट थिंक व्हाट पोजीशन इज सर वाल्टर स्मिथ। परसों

> हमसे कहते थे, अब तो सर वाल्टर हमको नन्हा बोलते हैं। बोला नन्हा, न्यू डिजाइन कम फ्राम बरमिंघम, तुम बेचेगा। हम बोला, वह बंगाली बाबू साला बुरा मान जायगा सर। बोला, आई डू नाट केयर फार बंगाली, तुम बेचेगा? हम बोला, यस सर। कल उसके दफ्तर जायेंगे, नया सैम्पुल लायेंगे। (नागर 2016:91)

अंग्रेजों के संपर्क से अंग्रेजी शिक्षा के प्रति लोगों की रुचि बढ़ने लगी थी। अब पढ़े-लिखे लड़के अनपढ़ लड़कियों को पत्नी रूप में ग्रहण करने से मना कर देते थे। यह एक नयी सामाजिक समस्या का रूप ले रहा था। उपन्यास में विपिन कहता है-

> एक बात कहें बाबू, बुरा न मानियेगा। खैराबाद के गाँव की गँवार औरत के साथ कैलासो जैसा पढ़ा-लिखा आदमी कैसे निर्वाह करेगा। न अंग्रेजी जाने न बंगला और गाने-रोने के नाम पर वही ससुरी 'छोटी बड़ी सुइयाँ रे जाली का मोरा काढ़ना।' कोई पढ़ा-लिखा ये गँवारपन सहन नहीं कर सकता है। (नागर 2016:92)

नयी चेतना से प्रेरित युवक अंग्रेजों की तरह ही अपनी पत्नी के साथ स्वच्छंदता से रहना चाहने लगे थे। युवा पीढ़ी को यह बात बुरी नहीं मालूम होती थी। पर बुजुर्ग ऐसी हरकत सहन नहीं कर पा रहे थे। दो पीढ़ियों में इसकी वजह से टकरार देखने को मिल रहा था। विपिन एक अंग्रेजी पोशक पहने स्वामी-स्त्री को स्वच्छंद होकर घूमते देखकर खुशी जाहिर करता है-

> सजे बजे कोट पतलूनधारी एक जवान बाबू, अपनी युवा पत्नी के साथ छड़ी लिए बड़ी शान से जा रहे थे। उन्हें देखते ही विपिन जोश से बोला: "ये देखिए ये हजबेंड एंड बाइफ कैसी आजादी के साथ घूम रहे हैंगे। इसमें बताइये भला क्या बुरी बात है? (नागर 2016:94)

भारतीय समाज में परिवर्तन लाने में ब्राह्म समाज का बहुत बड़ा योगदान है। ब्राह्म समाज ने बहुत से प्रगतिशील कदम उठाये थे। इस उपन्यास में आये निम्नलिखित संवाद से इस बात की पुष्टि होती है-

> हाँ यार, बात तो सही है तुम्हारी। केशवचंद्र सेन बाबू के ब्राह्मो समाज ने हुलिया ही बदल दी है। गैर बिरादरियों के लड़के-लड़कियों की शादियाँ होने लगी हैं। विधवाओं की शादियाँ होने लगीं। जनेऊ की रसम उड़ा दी। हिंदू सोसायटी में कभी ऐसा रेवोल्यूशन नहीं आया जैसा आज आ रहा है। (नागर 2016:94)

भारत में कलकत्ता अंग्रेजों की राजधानी थी। अंग्रेजों का संपर्क बंगाल से ही पहले पहल हुआ था। इस कारण पाश्चत्य विचारधारा और चेतना का प्रभाव बंगाल खासकर कलकत्ता में सबसे अधिक पड़ा था। इस कारण कलकत्ता में रहने वाले लोग पाश्चात्य समाज में मान्य आचरण सरलता से कर सकते थे। बंसीधर विपिन से कहता है-

> कलकत्ते में विलायती तहजीबो-तमद्दुन का दरवाजा लगभग एक सदी पहले खुल चुका है। इसलिए तुम यहाँ तक सोचने का हौसला रख सकते हो। मगर हमारा लखनऊ या नवाबगंज तो अभी कलकत्ते से दो हजार साल पिछड़े हुए हैं। (नागर 2016:99)

ब्राह्म समाज में शामिल परिवारों में ब्याह कर आयी बहुओं को मजबूर होकर अपने पूर्व के संस्कार छोड़ने पड़ते थे। उपन्यास में कुछ ऐसी बहुओं के संदर्भ में वर्णन आता है-

> नवीन ब्राह्म वातावरण की सौभाग्यवती सुचरिताबाला सान्याल अपने पूर्व गोकुलमणि जीवन के संस्कारों को पति गृह के मीठे-व्यंग्य-विनोदों के कारण छोड़ने को बाध्य हो रही थीं। चंपकलता भी अपने पति की रोक-टोक पर वैसे ही बाध्य होकर बदल रही थी। गोकुल उर्फ सुचरिता का एकादशी का व्रत छूटा, और उसके साथ ही साल भर होते रहने वाले अनेक उपवासों की कहानी भी बीत गयी। लगभग ऐसा ही हाल चंपकलता का भी हुआ। हरतालिका, बटसावित्री आदि अनेक व्रत उपवास उसे मजबूर होकर छोड़ने पड़े। (नागर 2016:115)

युवा पीढ़ी नयी विचारधारा से प्रभावित तो हो रही थी पर बहुत से युवा अपने पुराने संस्कारों को इतनी आसानी से त्याग नहीं पा रहे थे। जिन्हें बचपन से ही नया समाज मिला था,

उनके लिए तो यह समस्या नहीं थी। पर जिन्हें बाद में ऐसा परिवेश मिला था, उनके लिए अपने पूर्व संस्कारों को छोड़ पाना कठिन था। बंसीधर भी दूसरे वर्ग के युवाओं में आता है और उसे भी इस इस मुश्किल का सामना करना पड़ा था-

> बंसी के मन में आस्था-अनास्था के मिश्र संस्कार एक साथ उभरे। एक तरफ तो वह अपनी पत्नी को आधुनिक बनाने का तीव्र आग्रह रखता है, और दूसरे ओर माता देवी जगदंबा जैसे शब्द कान में पड़ते ही उसकी आस्था चंद्रिका मैया के साथ जुड़ जाती है। (नागर 2016:116)

युवा पीढ़ी समझ रही थी कि वर्तमान परिस्थिति में अंग्रेजी शिक्षा का बहुत महत्व है। पर पुरानी पीढ़ी उसे म्लेच्छों की भाषा करार देकर उसे सीखने के विरोध कर रही थी। ऐसा ही एक प्रसंग इस उपन्यास में भी आता है-

> रसूलपुर ग्रंट ग्राम की ब्राह्मण बिरादरी में फिर श्याम किशोर और उसके पिता को लेकर हाय हत्या शुरू होने लगी- "ब्राह्मण होके आज म्लेच्छों की भाषा पढ़ेगा, कल ईसाई मते की बातें चलाकर हम सब का धर्म भ्रष्ट करेगा। इनको बिरादरी से बाहर निकाल देओ। (नागर 2016:161)

अंग्रेज अपने समर्थक भारतीयों को बहुत सी सुख-सुविधाएँ और उपाधियाँ देते थे। इनमें एक उपाधि थी- रायसाहब की उपाधि। अपने प्रति वफादार रहने का यह इनाम था। लोग ऐसी उपाधियाँ पाने की ख्वाहिश में अंग्रेजों के वफादार बने रहते थे। ऐसी उपाधियाँ सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ाती थीं। यही कारण था कि लोग इन उपाधियों के लिए लालायित रहते थे। इस उपन्यास में बंसीधर को अंग्रेजों के करीबी बने रहने के इनाम स्वरूप रायसाहब की उपाधि दी जाती है जो उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि होती है-

> पहली जनवरी सन् 1886 का दिन। नौ बजे की डाक से इलाहाबाद का 'पायनियर' अखबार आया। अंग्रेजी पढ़े लिखों की दुनिया में चमक आ गयी, बाबू बंसीधर टंडन को रायसाहब का खिताब मिला था। देखते ही देखते शहर के पढ़े लिखों के हुजूम नये

> रायसाहब को बधाई देने आने लगे। चौक की बिरादरी भरी गलियों में यह शोर मच गया कि 'तनकुन हेड माश्टर' रायसाहब हो गये। (नागर 2016:271)

पढ़ी-लिखी युवा पीढ़ी को समझ में आ गया था कि लड़के-लड़कियों का विवाह बालिग होने पर करना चाहिए और विवाह में दिखावा करने के लिए फिजूलखर्ची नहीं करनी चाहिए। वे सामजिक सुधार का प्रयास करने लगे थे। इस उपन्यास में कौशल्या ऐसा ही प्रयास करती है-

> कौशल्या ने पढ़ी-लिखी लड़कियों में जागृति लाने के लिए उनकी सभा-गोष्ठियों का चलन भी तेजी से आगे बढ़ाया है। लड़की-लड़कों के विवाह उनके सयाने होने पर ही करने चाहिए। विवाह आदि उत्सवों में बहुत धन बेकार खर्च होता है, दिखावे की इस फिजूलखर्ची को रोकना चाहिए। (नागर 2016:338)

'ढाई घर' में चित्रित अंग्रेजकालीन भारत

यह उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है। चौरासी वर्ष के वृद्ध कथावाचक भास्कर राय अपने पिता और चाचाओं की कहानी इस उपन्यास में कहते हैं, जिसके साथ उनकी भी कहानी अनुस्यूत है-

> मेरा नाम भास्कर राय है। मैं उत्तर प्रदेश के पश्चिमी इलाके के एक पुराने खाते-पीते राय खानदान का अंतिम राय हूँ। (किशोर 2017:13)

भारत के स्वतंत्र होने के बाद जमींदारी प्रथा का उन्मूलन हो गया था। इसी कारण भास्कर राय अपने आप को अंतिम राय अर्थात् जमींदार कहते हैं। जमींदारी उन्मूलन को स्पष्ट करते हुए भास्कर राय कहते हैं-

> विरासत और सियासत दोनों ही नहीं रहे। (किशोर 2017:13)

भारतीय जमींदार अंग्रेजों के केवल राजनीतिक गुलाम ही नहीं थे, मानसिक गुलाम भी थे। अंग्रेजों द्वारा इस्तेमाल की गयी चींजें खरीदकर वे गर्व करते थे कि यह अमुक अंग्रेज अफसर की उतरन है। भास्कर राय अपने परिवार के बारे में कहते हैं-

> हमारे घर में अंग्रेजों की बहुत सी उतरनें थीं। उस उतरन को हम सौभाग्य की तरह लेते थे। हर एक को गर्व के साथ दिखाते थे। चाहे चैस्टर ड्राअर हो या सिंगार मेज या फिर फर्श या अन्य सजावट की चींजें। बर्तन को छोड़कर सब कुछ। हर चींज पर उस अंग्रेज अफसर की चिट लगी थी, जिससे खरीदी गयी थी। अमुक जज...अमुक कलक्टर...अमुक कमिश्नर। (किशोर 2017:15)

अंग्रेजी राज में भारतीय धनिक वर्ग भले ही अंग्रेजों की उतरनें रखना अपना सौभाग्य मानते रहे हो पर वे खान-पान में कट्टर ही थे। भास्कर राय अपने पिता बड़े राय के खान-पान में कट्टर हिंदू होने का वर्णन करते हुए कहते हैं-

> बड़े राय फारसी, अंग्रेजी और उर्दू अच्छी तरह जानते थे। उन्होंने एंट्रेंस तक पढ़ा था। अंग्रेजों में बैठते थे। सूट पहनते थे। लेकिन न शराब पीते थे, और न गौश्त खाते थे। अलबत्ता क्लब जाते थे। ब्रिज खेलते थे। किसी का छुआ न पानी पीते थे और न खाना खाते थे। गाँधी जी से उनकी नाराजगी का एक यह कारण भी था। कभी जब क्लब में या रईसों के यहाँ डिनर होता था, तो हलवाई का बना देशी खाना एक पण्डित उनके लिए अलग से लगा देता था। पीने का पानी भी कलई के बर्तनों में तौलिये से ढककर अलग मेज पर रख दिया जाता था। इन सब बातों को वह पूरे विश्वास के साथ स्वीकार करके चलते थे कि ऐसा ही हो रहा है। क्लब में मुसलमान भी नौकर थे, ईसाई भी थे और दूसरी जातों के भी थे। पर उनके लिए ब्राह्मण का लड़का रखा गया था। (किशोर 2017:16)

इस प्रकार अपने आपको अलग-थलग कर लेने पर लोग मजाक में कहते थे कि हरी राय ने खुद को अछूत बना लिया है -

> इसका नतीजा था कि दूसरे धर्मों और जातियों के ऐसे लोग जिनका आपस में खान-पान था आगे-पीछे हँसकर कहते थे कि हम क्या करें हरी राय साहब को हमने तो अछूत बनाया नहीं उन्होंने अपने आप ही अपने को अछूत बना लिया । (किशोर 2017:16)

अंग्रेज भक्त भारतीयों को अंग्रेजों के साथ संपर्क रखना, उनके संसर्ग में रहना और किसी भी तरह उनसे संबंध बनाना गर्व की अनुभूति से भर देता था। राय परिवार भी अरुण राय के अंग्रेज अध्यापकों से शिक्षा ग्रहण करने पर गर्वित थे-

> इस बात पर भी लोगों को गर्व था कि अरुण के मास्टर अंग्रेज हैं। (किशोर 2017:257)

उपन्यास में एक जगह अंग्रेजी राज के जमाने की वजन की ईकाइयों का भी उल्लेख है-

> तब तोल के बटखरे मन, सेर, छटाँक ही थे। (किशोर 2017:16)

बचपन में भास्कर राय पढ़ाई-लिखाई में गंभीर नहीं थे। पिता ने एक बार भास्कर राय के सामने भारत का भविष्य स्पष्ट करते हुए कहा था कि इस देश में आने वाले कल में शिक्षित लोगों का बोलबाला होगा। अत: उसे पढ़ाई-लिखाई पर ध्यान देना चाहिए-

> तुम्हें मालूम है आने वाला वक्त कैसा होगा? शायद नहीं, तुम लोग जो नौकरों पर हुकूमत चलाते हो, गाड़ियों पर घूमते हो वह सब कुछ नहीं रहेगा । रहेगा तो उन लोगों के पास जो बाइल्म होंगे । जब हम लोगों को यह एशो अशरत नसीब हुई थी, तब पढ़ाई-लिखाई इसका मयार नहीं था । खानदानियत थी, स्वामीभक्ति थी । सरकार-ए-बर्तानिया की नजर में खून और नस्ल को तरजीह दी जाती थी। आने वाला वक्त वैसा नहीं होगा । इसलिए कहता हूँ पढ़ो। पढ़ाई ही वह रोशनी होगी, जो तुम्हें रास्ता दिखायेगी। (किशोर 2017:18-19)

हमारे समाज में स्त्री शिक्षा हमेशा से उपेक्षित रही है। अंग्रेजी राज में भी यही हालत थी। भास्कर राय अपनी अनपढ़ माँ के बारे में बताते हैं-

> तब मेरी माँ जिंदा थी। एक निहायत सीधी और अहंकार विहीन महिला। यहाँ तक कि गिनना भी नहीं जानती थी। ...माँ के पास अठमासी होती थी। मुझे तुड़ाने के लिए दे देती थी। उन्हें आधे पौने दाम ही वापिस करता था। जहाँ तक मुझे याद है उन दिनों एक अठमासी की ऐवज में अठारह कलदार मिलते थे। कलदार माने चाँदी का रुपया। (किशोर 2017:20-21)

जब स्त्री आर्थिक रूप से पुरुष पर आश्रित होती है, तब उसे पुरुष के अधीन रहना पड़ता है। समाज में उसका कोई रुतबा नहीं होता। ऐसी स्थिति में मजबूर होकर उसे पुरुष की उचित-अनुचित हर बात माननी पड़ती है। भास्कर राय की माँ को अपने पति के मेहमानों के लिए आधी रात को भी भोजन तैयार करना पड़ता था। भास्कर राय के पिता अर्थात् बड़े राय की अपनी पत्नी के प्रति कैसा आचरण था इसको स्पष्ट करते हुए भास्कर राय कहते हैं-

> माँ की आँखें आधी रोने में गयी थीं और आधी चूल्हा फूँकने में। यह बात सबको अखरती थी कि माँ चूल्हा फूँकें। चार-चार मिस्सर थे। एक बनाता था दूसरा खिलाता था। एक दोपहर का खाना बनाता था दूसरा शाम का। लेकिन जब कभी रात-बेरात मेहमान आ जाते थे, तो माँ को खुद चूल्हा फूँकना पड़ता था। यह संभव नहीं था कि मेहमान बिना खाये-पीये सो जायें। चाहे रात के बारह बजे हो या दो...कई बार माँ बनाकर तैयार करती थीं और मेहमान खाकर आये हुए होते थे। (किशोर 2017:22)

जमींदार वर्ग को अपने पद और रुतबे का बहुत अहंकार था। वे अपनी प्रजा को हमेशा अपने जूते के नीचे रखना चाहते थे। एक बार मझले राय के घोड़े पर एक गाँव से गुजरते वक्त उन्हें न पहचानने के कारण एक बारात के बाराती बारात रोककर उनके सम्मान में खड़े नहीं हुए। इस

पर मझले राय ने उन बारातियों को पाँच-पाँच जूते लगाने का हुक्म दिया और उनको डराया-धमकाया। इस घटना के बारे में भास्कर राय कहते हैं-

> मझले राय को हुक्मउदूली पसंद नहीं थी। वे बोले- "तुम लोगों को गाँव में रहना है या नहीं।" वे फिर भी तैयार नहीं हुए। थोड़ी दूर पर डेरा था। वहाँ से अपने आदमियों को बुलवाया। जितने लोग वहाँ मौजूद थे शुरू से आखिर तक सबको जूते लगवाये। जिन्होंने हुक्मउदूली की थी,उन्हें नंगा कराकर गुदा में डण्डा चढ़वाया। (किशोर 2017:36)

प्रजा से लगान वसूल करने में जमींदार किस कठोरता का सहारा लेते थे और उन पर कितना अमानवीय अत्याचार करते थे इसका वर्णन भास्कर राय के द्वारा उपन्यासकार ने किया है-

> आसामी सवेरे से आना शुरू हो जाते थे।...लात लगते ही वह उल्टे मुँह जमीन पर कुत्ते की तरह हाथ-पाँव सहित पसर जाता और मुँह से खून की धार बहने लगती। कभी-कभी दाँत तक टूट जाता। कुछ लोगों को डण्डा-डोली करके लाया जाता। वे लोग इतने भयभीत होते जैसे उन्हें लोककथा के किसी दानव के भोजन के लिए ले जाया जा रहा हो। ये लोग पिटते भी और बड़े दीवान जी के पाँव भी पड़ते। (किशोर 2017:37-38)

भारत में अंग्रेजों ने ही रेल चलायी थी। प्रारंभ में लोग रेल में बैठना अपवित्र मानते थे। रेल को लेकर लोगों की धारण कुछ इस प्रकार थी-

> जब कहीं लाइन बिछती थी तो लोग समझते थे जरूर कोई मुसीबत आने वाली है। अन्य शहरों की सब अलाय-वलाय इस रेलगाड़ी में बैठकर यहाँ भी आ जायेगी। अंग्रेज जानकर सारी अलाय-बलाय गाँवों में भेज रहे हैं, जिससे वह उन्हें तंग न करे। जब रेलगाड़ी चलती थी तो लोग उसे काली-कलकत्ते वाली का अवतार समझते थे। पूजा

> करते थे।...हाँलाकि शुरू में लोग रेलगाड़ी में बैठना अपवित्र मानते थे। जहाँ अपवित्र मानते थे वहीं उसे काली का रूप भी कहते थे। रेल में सफर करते हुए पानी पीना तक हराम माना जाता था। लोग कई-कई दिनों तक पूरा का पूरा सफर बिना पानी पिये और मुँह जूठा किये कर आते थे। (किशोर 2017:42)

जमींदार वर्ग का दबदबा प्रजा पर जिस प्रकार छाया रहता था, उसी प्रकार जमींदार वर्ग पर अंग्रेजों का दबदबा भी छाया रहता था। अंग्रेज जमींदार के लिए प्रभु थे, अपने ऊँचे नस्ल के अहंकार में चूर। किशोरावस्था के दिनों में एक बार भास्कर राय का गिग (घोड़ा गाड़ी) अंग्रेज कलक्टर की बीवी की गाड़ी से टकरा जाता है और गाड़ी पलट जाती है। कलक्टर की पत्नी को चोट भी आती है। भास्कर राय और उनके साथी अँधेरे का फायदा उठाकर गिग समेत भाग आते हैं। इस बात का जब बड़े राय को पता चलता है, तब वे भास्कर को डाँटते हुए जो बातें कहते हैं वह जमींदार वर्ग पर अंग्रेजों के आतंक को व्यक्त करते हैं-

> उसे पता चल गया कि टक्कर हमारे फरजंद ने मारी है तो वह हमारे साथ तो जो करेगा सो करेगा ही तुम्हें उल्टा लटकवा कर बेंतों से पिटवायेगा। (किशोर 2017:46)

अंग्रेज भारतीयों को किस लायक समझते थे इसको व्यक्त करते हुए पौवल प्राइस के अंग्रेज मित्र उनसे कहते हैं-

> तुम इन हिंदुस्तानियों से क्यों दोस्ती रखते हो। वे 'यूज एण्ड थ्रो' के अलावा और किसी लायक नहीं। (किशोर 2017: 58)

मझले राय को बच्चा नहीं हुआ था। इस कारण उन्होंने अपनी पत्नी में क्या कमी है जानने के लिए एक अंग्रेज लेडी डाक्टर को दिखाया। डाक्टर ने बताया कि उनकी पत्नी में कोई कमी नहीं है, वे एक बार जाँच करा लें। इस बात से मझले राय बड़े नाराज हुए। उनकी मनस्थिति के बारे में भास्कर राय लिखते हैं-

> मझले राय मेम की इस बात से बहुत नाराज हो गये थे। यही नहीं उन्हें मेम की बेशर्मी पर बड़ा आश्चर्य हुआ था। उसने औरत होकर यह बात उनसे कही कैसे? लेकिन सुनकर चुपचाप चले आये। अगर अँग्रेज न हुई होती तो वे उसे जरूर जली-कटी सुनाकर आते। बस वे इतना कह पाये "मैडम यह हिंदुस्तान है, विलायत नहीं।" जैसे विलायत में पुरुष नामर्द होते हो। (किशोर 2017:69)

पुरुष कभी नहीं मान सकता कि कमी उसमें हो सकती है। मझले राय दूसरी शादी करके अपनी पहली पत्नी से दूर रहने लगते हैं। पर उन्हें दूसरी पत्नी से भी बच्चा नहीं होता। मझले राय अपनी पहली पत्नी का तिरस्कार करते हुए कहते हैं-

> वे जोर से हँसे- "तुम इतनी ज्ञानी कब से हो गयी। मैं जानता हूँ अगर मैं तुम पर प्रेम की नदियाँ भी उड़ेल दूँ तो तुम बच्चा नहीं जन सकती।"
>
> "नहीं मैं जन सकती हूँ- मुझ पर यह दोष न लगाइये।"
>
> "असल बाप की हो तो जन कर दिखाओ।"
>
> "तुम्हारे बिना?"
>
> "हाँ हाँ, मेरे बिना।"
>
> ....
>
> "हाँ, मैं देखूँगा तुम्हारी वह मेम जिसका तुमने पेट भरा है तब क्या कहेगी जब पतिव्रता गँवाकर भी बच्चा पैदा नहीं कर पाओगी?" (किशोर 2017:78)

इसके बाद मझले राय की पत्नी बीमार रहने लगती है। कुछ महीनों बाद उसकी मृत्यु हो जाती है। बाद में पता चलता है कि उसे तीन महीने का गर्भ था। उसने पतिव्रता भंग करके साबित कर दिया था कि वह माँ बन सकती है। इसके बाद एक बार छोटे राय और मझले राय में बहस होती है। मझले राय अपनी पहली पत्नी को कुलटा कहते हैं। मझले राय आगे कहते हैं-

> मैंने चुनौती दी तो उसने मान ली- वाह री पतिव्रता। मैं जानना चाहता हूँ वह बच्चा किसका था?
>
> वह न मानती तो तुम जिंदगी भर मर्द और बेबोझ बने रहते। तुम्ह उन्हें कोसते रहते। क्योंकि वह औरत निपूती और नि:संतान थी। कोई भी स्त्री जीवन भर नि:संतान रहकर जी सकती है पर बाँझ होने का झूठा लांछन बर्दाश्त नहीं कर सकती। (किशोर 2017:87)

अंग्रेजी राज में भारतवर्ष में अफीम-कोकीन का विष घर-घर व्याप गया था। इस उपन्यास में किशन बाबू के संदर्भ में कोकीन और अफीम का वर्णन आता है-

> किशन बाबू को पान में कोकीन रखकर खाने का चस्का पड़ गया था। एक ही पनवाड़ी था रामो, जो कोकीन का पान लगाता था।...कोकीन का पान खाकर जबान ऐंठ जाती थी और आँखों में सुरूर आ जाता था।...उस जमाने में कोकीन का पान पाँच रुपये का आता था। बाद में जब दाम बढ़ गये तो कोकीन का पान खाना मुश्किल हो गया। तब वे अफीम पर उतर आये। रोज चार आना भर अफीम खाते थे। (किशोर 2017:109)

इस उपन्यास में गाँधी जी के अहिंसा आंदोलन और भगत सिंह के सशस्त्र आंदोलन का भी वर्णन हुआ है। उपन्यास में कहा गया है कि जगन, जो कि उपन्यास का एक पात्र हैं, उन्हें गाँधी जी की यह जानकारी बाद में मिली थी-

> यह उन्हें बाद में पता चला कि विदेश में पढ़कर लौटने वाले नौजवानों के बारे में गाँधी जी जानकारी रखते थे। उनका जनसंपर्क इतना जबरदस्त था कि हर नौजवान को उनका संदेश जहाज पर या विलायत में ही मिल जाता था। (किशोर 2017:206)

भगत सिंह भारत माता को पराधीनता की बेड़ियों से आजाद करने के लिए किस हद तक जुनूनी थे यह बताने की आवश्यकता नहीं है। इस उपन्यास में भगत सिंह कहते हैं-

> किसका दिन किसकी रात अब तो एक ही लौ लगी है हिंदुस्तान के लिए आजादी और पेटों के लिए रोटी । आप लोग (अहिंसावादी) आजादी को पुरातत्त्व विज्ञानियों की तरह धीरे-धीरे उकेर रहे हैं । हम चाहते हैं, इधर चाक करें और उधर आजादी का अण्डा बाहर आ जाये । मुल्क उनके पास हो जिनका है । रोटी उनके घर में हो जो उसे कमाते हैं । अभी तो जनाब देश भी बँधा पड़ा है और रोटी भी । (किशोर 2017:208)

निष्कर्ष :

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि दोनों उपन्यासों का कथ्य अलग-अलग वर्ग से संबंधित है । 'करवट' जहाँ उभरते मध्यवर्ग का चित्रण करता है वही 'ढाई घर' उच्चवर्ग का । 'करवट' में हम देखते हैं कि अंग्रेजी शिक्षा का आश्रय लेकर एक मध्यवर्ग उभर रहा था । अंग्रेजों के आने के पहले भारत में मध्यवर्ग का अस्तित्व नहीं था। यह मध्यवर्ग जो अंग्रेजी शिक्षा से शिक्षित था,पाश्चात्य विचारधाराओं से परिचित होकर भारतीय समाज-व्यवस्था को अंदर से बदलाव लाने लगा था । 'ढाई घर' उपन्यास में हम जमींदारों के अंग्रेजों से संबंधों को देख सकते हैं । जमींदार जिस प्रकार प्रजा के लिए खौफ का कारण थे, उसी प्रकार अंग्रेज भी जमींदारों के लिए खौफ के कारण थे । जमींदार अंग्रेजों के लिए लगान वसूल करके अंग्रेजों की अर्थनीति और उनका भारत में रहने का उद्देश्य पूरा करते थे । इस प्रक्रिया में दीन-हीन किसानों के साथ अमानवीय अत्याचार होता था । कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि 'करवट' और 'ढाई घर' में उपन्यासकारों ने अंग्रेज़कालीन भारतवर्ष तथा बदलावों का यथार्थ चित्रण किया है।

ग्रंथ-सूची

किशोर, गिरिराज. ढाई घर. द्वितीय आवृत्ति. दिल्ली: राजपाल एण्ड सन्ज, 2017.

तिवारी, डॉ. रामचंद्र. हिंदी का गद्य-साहित्य. नवम् संस्करण . वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2014.

नागर, अमृतलाल. करवट. दिल्ली: राजपाल एण्ड सन्ज, 2016.

राय, गोपाल. हिंदी उपन्यास का इतिहास. छठा संस्करण. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2016.

संपर्क-सूत्र:
सहायक प्राध्यापक
संदिकै बालिका महाविद्यालय
ई-मेइल: 666mandal@gmail.com